16

समाज कार्य शिक्षा और प्रशिक्षण की वृद्धि

*तुष्टि भारद्वाज

प्रस्तावना

भारत में कई शताब्दियों से समाज कल्याण अपरिचित विषय तो नहीं था, परंतु समाज कार्य शिक्षा का उद्‌गम देशीय नहीं है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य शिक्षा के विकास के प्रतिमान से अत्यधिक प्रभावित है। उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान, समाज कार्य वैज्ञानिकों ने जाँच-पड़ताल करने के लिए वैज्ञानिक विधियों का बहुत अधिक प्रयोग किया। समाज कार्य भी वैज्ञानिक प्रणालियों से प्रभावित हुआ। यह नवीन ज्ञान और कौशलों पर आधारित होने लगा। पुराने धर्मार्थ आंदोलनों के विपरीत, धर्मार्थ संगठन समाज (सी.ओ. एस.) ने वैज्ञानिक दानशीलता का प्रयोग किया जिसके लिए ज्ञान, कौशलों एवं अच्छे इरादे की भी अपेक्षा की जाती थी। अतः कौशलों और ज्ञान में प्रवीण होने के महत्व पर बल दिया जाता था। वैतनिक अभिकर्ता जाँच-पड़ताल करते थे और एक स्वैच्छिक "मित्रवत आगंतुक (निरीक्षक)" को परिवर्तन में लाने के लिए नियुक्त किया जाता था। मैरी रिचमंड ने जोकि बाल्टीमोर धर्मार्थ संगठन समाज की नेता थी ऐसे सम्मेलनों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रारंभ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। धीरे-धीरे दूसरे क्षेत्रों में भी सामाजिक कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की आवश्यकता महसूस की जाने लगी, और संयुक्त राज्य में अनेकों शहरों में प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। 1898 में, न्यूयॉर्क चेरिटी ऑर्गनाइज़ेशन सोसाइटी द्वारा सामाजिक कार्यकर्ताओं के एक काडर (वर्ग) को प्रशिक्षित करने के लिए छह हफ्ते का ग्रीष्म प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। यह संभवतः विश्व का पहला औपचारिक समाज कार्य शिक्षा कार्यक्रम था। इसे तब न्यूयॉर्क स्कूल ऑफ फिलेन्थ्रोपीलोकोपकार का न्यूयार्क स्कूल कहा जाता था। 1904 से यह स्कूल एक वर्ष का एक पाठ्यक्रम प्रदान करने लगा और इसने खुद को कोलम्बिया विश्वविद्यालय से संबद्ध करा लिया और 1910 से इसे न्यूयॉर्क स्कूल

* *तुष्टि भारद्वाज, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर कॉलेज, नई दिल्ली*

ऑफ सोशल वर्क के नाम से जाना जाने लगा। पूरे विश्व में समाज कार्य धीरे-धीरे कई कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में अध्ययन का कार्यक्रम बन गया। भारत में समाज कार्य शिक्षा और प्रशिक्षण 1936 में मुम्बई से प्रांरभ हुआ।

समाज कार्य शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

भारत में समाज कार्य का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी पुरानी सभ्य समाज की व्यवस्था है। हमारे देश के समाज कार्य एक ऐसी गतिविधि के रूप में प्रारंभ हुआ जिसका उद्देश्य व्यक्तियों और समूहों की बुनियादी भौतिक आवश्यकताओं के स्तर पर राहत प्रदान करना था। प्राचीन भारत में बौद्ध काल में और बाद में गुप्त काल में, अक्षम और निराश्रित लोगों के लिए कल्याण कार्यक्रम आयोजित किए जाते थे। राजा, अशोक द्वारा स्वास्थ्य और स्वच्छता संबंधी अनेक उपाय किए गए। सम्राट अशोक ने समाज सेवाएं आयोजित कीं और स्वच्छ व मनोहर पर्यावरण बनाने के लिए भी कार्य किया। दिल्ली सल्तनत के दौरान, राजा फिरोज़शाह तुगलक द्वारा धर्मार्थ संगठनों और जन कल्याण पर ध्यान देने के लिए दीवाने-खैरात (धर्मार्थ संगठन) नामक एक विशिष्ट विभाग स्थापित किया गया।

केवल राजाओं और संपन्न वर्गों द्वारा ही परोपकार और धार्मिक दानशीलता संबंधी प्रयास नहीं किए गए बल्कि भारतीय समाज की संरचना में ही परिवार, जाति और समुदाय की संस्थाओं द्वारा ज़रूरतमंद व निराक्षित व्यक्तियों की देखभाल करने के उपायों का प्रावधान किया गया है। हिंदू समाज की संरचना ऐसी थी कि संयुक्त परिवार द्वारा निस्सहाय सदस्यों की देखभाल की जाती थी और जाति भावनाओं ने नातेदारी के मज़बूत बंधनों की रचना की। पंचायती राज की संस्था ने आधारिक संरचना बनाने के अलावा ग्राम समुदाय को सहायता प्रणाली भी प्रदान की।

संयुक्त परिवार प्रणाली परिवार के ज़रूरतमंद और निराश्रित सदस्यों की देखभाल करने के लिए एक उपयोगी युक्ति सिद्ध हुई; यह किसी व्यक्तिगत योगदान की परवाह किए बिना बाल विधवाओं की शारीरिक रूप से अपंग मानसिक रूप से मंद अक्षम व्यक्तियों और बेरोजगार सदस्यों को बचाव व सुरक्षा प्रदान करती थी।

जाति प्रथा कई शताब्दियों से एक संस्था के रूप में बढ़ी और विकसित हुई है और भारतीय सामाजिक संरचना में इसकी जड़ें गहराई तक सुदृढ़ता से ज़मी हुई हैं। जाति मूल्य क्योंकि सेवा के आदर्शों पर आधारित थे अतः अपने सदस्यों के हितों का ध्यान रखने में और अपनी जाति के लोगों के कल्याण को सवंर्धित करने में जाति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। इस प्रथा ने अपनी खुद की संगठनात्मक संरचना विकसित की है और यह अपनी 'बिरादरी' के लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है।

भारतीय सामाजिक संरचना का दूसरा नेस स्तंभ है ग्राम समुदाय, जिसने अतीत में "ग्राम पंचायत" द्वारा स्थानीय स्वायत्तता का उपभोग किया है। इसको कार्यपालक और नयायिक दोनों ही शक्तियाँ प्राप्त होती थी और राजा के अधिकारियों द्वारा इसके सदस्यों के साथ बहुत आदर और सम्मानपूर्ण व्यवहार किया जाता था। पंचायत, भूमि का वितरण भी करती थी, प्रक्रियाओं से कर एकत्र करती थी और गाँव की ओर से सरकार के हिस्से का भुगतान करती थी।

मुसलमानों और यहूदियों जैसे अन्य धार्मिक सम्प्रदायों की क्रमशः ज़ाकत और तिथे प्रणालियाँ थीं जो ज़रूरतमंदों को कल्याणकारी सेवाएं प्रदान करती थीं। हिंदू धर्म में भी, दान दक्षिणा, हिस्सा बाँट वृद्धाश्रम, धर्मशाला जैसी संस्थाओं का निर्माण आदि धार्मिक दायित्व माने जाते थे जिन्हें अनेकों तरीकों से सुदृढ़ किया जाता था।

ब्रिटिश राज के दौरान, ईसाई मिशनरियों ने सामाजिक सुधार की लहर उत्पन्न की। सिरामपोर मिशनरी भारत में पहले सुरमाचारी बपतिस्मा-दाता मिशनरी थे, जिन्होंने भारतीय सामाजिक संरचना के अंतर्गत आवश्यक सुधार संबंधी उपायों की पूरी श्रृंखला की ज़रूरत का निर्धारण किया। उन्होंने बाल-विवाह, बहु-विवाह और मादा भ्रूण हत्या, कुलीनवाद, आत्म-प्रताड़ना और घाट हत्याओं का विरोध किया। उन्होंने सती (प्रथा) के उन्मूलन के लिए कार्य किया और विधवा पुनर्विवाह के पक्ष का समर्थन किया।

इसके अलावा राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद विद्यासागर जैसे कुछ भारतीय सुधार आंदोलन के महान समर्थकों के रूप में उभरे। भारतीय समाज को अशक्त कर रहे विभिन्न मुद्दों जैसे सती प्रथा के उन्मूलन में राजा राममोहन राय की पहल, विधवा पुनर्विवाह के लिए ईश्वरचंद विद्यासागर की पहल, महिलाओं की

शोषण और भेदभाव से मुक्ति के लिए शशिपद बनर्जी और केसबचंद सेन के प्रयास तथा एम.जी.रानाडे, ज्योति राव फुले, डी.के.कार्वे, गोपाल हरी देशमुख और तिलक द्वारा भारतीय समाज को अशक्त कर रहे विविध मुद्दों को संबोधित किए गए प्रयासों ने भारत में समाज सुधार आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया। यह आंदोलन बाद में गांधी जी के नेतृत्व में राजनीतिक स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ गया जिसके बारे में अन्य खंडों में आप पहले ही पढ़ चुके हैं।

19वीं शताब्दी का समय केवल व्यक्तिगत कार्यों और विरोधों का ही समय नहीं था बल्कि इस दौरान कई महान विकासोन्मुख आंदोलनों का भी जन्म हुआ। उस समय के समाज सुधारकों के प्रयासों द्वारा ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन और थियोसोफिकल (ब्रह्मज्ञान) सोसाइटी की स्थापना की गई। यद्यपि, ये सभी धार्मिक आंदोलन थे परंतु ये समाज सुधार में भी गहन रुचि रखते थे। 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक भाग में, सामाजिक सुधार धार्मिक परिवर्तन से दृढ़ता से जुड़ा था। लेकिन जैसे-जैसे शताब्दी आगे बढ़ी, सुधारों में अधिक उदार, बौद्धिक और मानवतावादी दृष्टिकोण उत्पन्न हुआ। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में समाज कार्य दृष्टिकोण काफी हद तक सुधार संबंधी था। कल्याण गतिविधियों में गरीबों को राहत पहुँचाने, दृष्टिहीनों, मूक और बधिरों की देखभाल करने और धर्मार्थ दवाखाने अस्पताल, स्थापित करने और विधवाओं तथा अनाथों के लिए संस्थाएं प्रारंभ करने पर मुख्य रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया। 19वीं शताब्दी के दौरान महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के कार्यों का नेतृत्व पुरुषों द्वारा किया गया था। 1917 में दो अंग्रेज़ महिला डॉ. ऍनी बीसेंट और सुश्री मार्गरेट कज़िन्स मद्रास में भारतीय महिला संघ स्थापित करने में प्रभावी थीं। इसके बाद 1925 में राष्ट्रीय महिला परिषद की स्थापना की गई।

20वीं शताब्दी में महात्मा गांधी सामाजिक क्रांति के अग्रदूत बने। उन्होंने गाँवों में रचनात्मक कार्य प्रारंभ करके ग्रामीण भारत में राजनीतिक परिवर्तन लाने के लिए सर्वोदय आंदोलन प्रारंभ किया। उन्होंने संपूर्ण ग्रामीण समुदाय और विशेष रूप से लाभवंचित समूहों जैसे महिलाएं और अछूतों की समस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इन कार्यक्रमों से जनसमुदाय के बड़े भागों को संगठित सामाजिक गतिविधियों की पहली बार जानकारी मिली। आत्मनिर्भर समुदाय बनाने के लिए लोगों को शिक्षित, जागरूक और संघटित करने के लिए गाँधीजी ने "नई तालीम" पर ज़ोर दिया।

इसके साथ ही साथ, बदलते सामाजिक लोकाचार और सामाजिक संरचना से, पारिवारिक बंधन और समुदाय की सम्पत्तियाँ कमज़ोर होने लगीं। अब पारिवारिक संरचना के अंतर्गत व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जाता था और न ही उनकी देखभाल की जाती थी। धीरे-धीरे अन्य पक्ष के अंतःक्षेप की आवश्यकता पड़ी और हम पश्चिमी देशों की ओर देखने लगे और उनके अनुभवों से जानकारी के नये रास्ते खुल गए।

सामाजिक सुधार के इन सभी अंतःक्षेपों ने सामूहिकता के लिए और अपने स्वयं के कल्याण और विकास में लोगों की सहभागिता के लिए मंच तैयार किया है। यहाँ यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि इस अवधि तक, समाज कार्य को संकल्पवाद (स्वैच्छिकतावाद) से थोड़ा बहुत जोड़ा जाता था और व्यवसाय के रूप में या एक विषय के रूप में नहीं माना जाता था जिसे किसी औपचारिक परिवेश में सीखा जाए। अतः इसमें लोगों को प्रशिक्षित करने की भी कोई आवश्यकता नहीं थी।

भारत में, समाज कार्य में व्यावसायिक प्रशिक्षण डॉ. क्लिफोर्ड मन्शार्ट के प्रयासों से शुरू हुआ था। वे एक अमरीकी मिशनरी थे और उन्होंने शिकागो विश्वविद्यालय से धर्मविज्ञान में स्नातक उपाधि प्राप्त की थी। वे 1525 में अमरीकी मराठी मिशन, जो एक प्रोटेस्टेंट इसाई संगठन था के माध्यम से भारत आए। इस संगठन ने मलिन बस्तियों में काम करने का निश्चय किया और इस उद्देश्य से इसने 1926 में नागापाड़ा पड़ौस गृह की स्थापना की। इसकी अध्यक्षता डॉ. क्लिफोर्ड मन्शार्ट ने इसके प्रमुख निदेशक के रूप में की। अपने उद्देश्यों और गतिविधियों में यह संस्था बस्ती गृह के समान थी। यह ऐसे क्षेत्र में स्थित थी जिसकी कई सामाजिक समस्याएं थीं जैसे निर्धनता, जुआ और वेश्या-वृत्ति। ये समस्याएं तेजी से बदलती उस सामाजिक संरचना का परिणाम थीं, जिसने परिवार के बंधन और समुदाय मैत्री को कमज़ोर कर दिया था। डॉ. मन्शार्ट ने समाज कार्य का स्कूल बनाने का विचार प्रस्तुत किया जिससे भारतीय स्थितियों में काम करने के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति की आवश्यकता को पूरा किया जा सके। सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट से वित्तीय सहायता प्राप्त करके 1936 में पहला स्कूल स्थापित किया गया जिसे सर दोराबजी ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल साइंसेज के नाम से जाना जाता था। इसे 1944 में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज का नाम दिया गया। चूंकि, यह स्कूल अमरीकी अनुभवों के आधार पर

स्थापित किया गया था अतः इसमें उसकी तीन प्रमुख विशेषताएं थीं: इसमें प्रवेश के लिए स्नातक की उपाधि की आवश्यकता थी, यह दो वर्ष की अवधि का था और अमरीकी पद्धति के अनुरूप ही इसे 'स्कूल' कहा जाता था।

सामाजिक कार्य की शिक्षा में विद्यार्थियों को सैद्धांतिक जानकारियाँ देने के अलावा उनके प्रायोगिक (व्यावहारिक) परीक्षण पर काफी जोर दिया जाता है। चूँकि, समाज कार्य मानव सेवा से संबंधित व्यवसाय है, अतः इसकी पाठ्यक्रम में कई सामाजिक विज्ञानों और मानविकी पाठ्यक्रमों से पाठ्य सामग्री ली गई है जैसे मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, राजनीतिक विज्ञान, अर्थशास्त्र और प्रबंधन। विद्यार्थियों से अपेक्षा की जाती हैं कि वे शैक्षिक सामग्री से उपयुक्त मनोवृत्ति और ठोस कौशल आधार विकसित करे। समाज कार्य शिक्षा की शुरुआत के साथ समाज कार्य की संकल्पना में काफी परिवर्तन आया है। समाज कार्य को दाब, कल्याण और स्वैच्छिक आधार पर असंगठित सेवाओं से जोड़ने की पूर्व विचारित धारणा लुप्त होने लगी और अब समाज कार्य को एक ऐसी व्यावसायिक गतिविधि के रूप में देखा जाने लगा जिसके लिए विशिष्ट ज्ञान और कौशल आधार होना आवश्यक है।

यद्यपि, हमारे देश में समाज कार्य एक स्नातकोत्तर कार्यक्रम के रूप में शुरू हुआ था लेकिन आजकल हमारे यहाँ ऐसी संस्थाएं हैं जो समाज कार्य में स्नातक, स्नातकोत्तर, एम.फिल, पीएच-डी. और डी.लिट्. स्तर तक की उपाधियाँ प्रदान कर रही हैं। स्नातक स्तर पर समाज कार्य कार्यक्रम मुख्य रूप से विशेष उपाधि के रूप में प्रदान किया जाता है लेकिन कुछ संस्थाओं में यह बी.ए. कार्यक्रम के भाग के रूप में भी उपलब्ध है। इसकी प्रारंभिक पाठ्यचर्या ब्रिटिश पद्धति सहित अमेरिकन स्कूल ऑफ सोशल वर्क पर आधारित थी। वस्तुतः, भारत में, समाज कार्य शिक्षा के कई पथप्रदर्शकों ने अमरीकी संस्थाओं में इस व्यवसाय की ओर दिशा ग्रहण की थी। अतः सिद्धांत और प्रयोग के लिए भारत आधारित पाठ्यचर्या विकसित करने के लिए बहुत थोड़ा प्रयास किया गया। समस्त प्रयास इस दिशा में किए गए कि पाठ्यचर्या को भारतीय सामाजिक स्थितियों के अनुकूल बनाकर पश्चिमी विषयवस्तु को ही भारत में फिट कर दिया जाए। प्रोफेसर देसाई ने उल्लेख किया है कि 1936 में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसिज द्वारा शुरू की गई। पहली पाठ्यचर्या में व्यक्तिगत समाज कार्य,

प्रशासन और अनुसंधान की विधियाँ शामिल थी। समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान और मानवविकास से संबंधित विषय भी उपलब्ध थे। लक्ष्य समूहों से संबंधित विषयवस्तु में बच्चे, परिवार, किशोर अपराधी और चिकित्सा एवं सूचना शामिल की गई थी। ये सभी पाठ्यक्रम अनिवार्य थे और इनमें विशेषज्ञता प्राप्त करने के लिए कोई प्रावधान उपलब्ध नहीं था।

दस वर्षों तक पाठ्यचर्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ और सभी विषय वैसे ही चलते रहे। स्वतंत्रता के समय के करीब टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसिज पर विशिष्ट संस्था संबंधित नौकरियों के लिए कार्मिकों को तैयार करने पर दबाव डाला जाने लगा। इसके फलस्वरूप अस्पताल आधारित सेवा प्रदाताओं के लिए चिकित्सीय और मनश्चिकित्सीय समाज कार्य में विशेषज्ञता और किशोर अपराध संबंधी अदालतों में शामिल व्यक्तियों के लिए सुधारात्मक प्रशासन और अपराध विज्ञान, परिवीक्षा क्षेत्र और अन्य सुधारात्मक विन्यास, श्रमिक कल्याण और औद्योगिक सरोकारों को संबोधित करने के लिए खास तौर से श्रमिक कल्याण अधिकारियों और कार्मिक प्रबंधकों की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने के लिए कार्मिक प्रबंधकों आदि के संबंध में विशेषज्ञता हेतु पाठ्यचर्या प्रारंभ करने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

आज, हमारे देश में समाज कार्य शिक्षा में किसी एक समान पद्धति का अनुपालन नहीं किया जाता, बल्कि कुछ संस्थाएं तो समाज कार्य में सामान्य पाठ्यक्रम प्रदान करती हैं जबकि अन्य संस्थाएं विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञता प्रदान करती हैं। आइए, भारत में, समाज कार्य शैक्षिक संस्थाओं की वृद्धि पर विस्तार से जानकारी हासिल करें।

समाज कार्य शैक्षिक संस्थाओं की वृद्धि

टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज (टी.आई.एस.एस.) की स्थापना 1936 में हुई थीं और यह राष्ट्रीय महत्ता की समाज कार्य का सबसे पहला स्नातकोत्तर संस्थान है। यह संस्थान भारतीय सामाजिक मुद्दों और समस्याओं के सतत् अध्ययन में संलग्न है और प्रशिक्षित जनशक्ति की उभरती आवश्यकता को पूरा करने के लिए समाज कार्य में शिक्षा प्रदान करता है। इस विकास ने भारत में समाज कार्य शिक्षा और सामाजिक अनुसंधान के लिए कार्य को और आगे बढ़ाया। लगभग एक दशक तक, टी.आई.एस.एस. एकमात्र संस्थान था जो

समाज कार्य संबंधी शैक्षिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहा था और इसके अलावा देश में समाज कार्य शिक्षा का दूसरा कोई कार्यक्रम नहीं था।

दिल्ली स्कूल ऑफ सोशल वर्क, जिसे अब समाज कार्य विभाग कहा जाता है भारत में स्थापित किया जाने वाला समाज कार्य का दूसरा स्कूल है। पहले इस समाज कार्य में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के लिए शिक्षण कार्यक्रम प्रदान करने के लिए एक विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त करनी थी। इस स्कूल की स्थापना सबसे पहले लखनऊ में समाज कार्य के राष्ट्रीय वाई.डब्ल्यू.सी.ए. स्कूल के रूप में की गई थी। प्रारंभ में, इस स्कूल द्वारा अलग-अलग अवधि के समाज कार्य पाठ्यक्रम प्रदान किए गए। 1950 से इसने स्नातकोत्तर स्तर पर दो वर्ष का प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किया। इसे अप्रैल 1961 में दिल्ली विश्वविद्यालय ने समाज विज्ञान के संकाय में एक स्नातकोत्तर विभाग के रूप में अपने अधिकार में ले लिया। अब यह समाज कार्य में एम.ए., एम.फिल. और पीएच.डी. उपाधि में प्रदान करता है।

1947 में, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद और काशी विद्यापीठ, वाराणसी ने ऐसे कार्यक्रम स्थापित किए। गुजरात विद्यापीठ की स्थापना 18 अक्टूबर 1920 को महात्मा गाँधी द्वारा भारतीय युवकों को ब्रिटिश उपनिवेशी शासन की बेड़ियों से मुक्त कराने के बारे में शिक्षित करने के लिए की गई थी। 1930 तक विद्यापीठ भाषाओं में और समाज विज्ञान में स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम उपलब्ध कराता था। 1930 और 1932 के नागरिक अवज्ञा आंदोलनों और 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान विद्यापीठ ने अस्थायी रूप से काम करना बंद कर दिया। विद्यापीठ ने 1945 से पुनः काम करना प्रारंभ कर दिया और जून 1947 में महादेव देसाई कॉलेज ऑफ सोशल वर्क स्थापित किया गया। 1963 में भारत सरकार ने विद्यापीठ को मानित विश्वविद्यालय के रूप में घोषित किया। यह संस्थान गाँधीजी के समाज सेवा उन्मुखी शिक्षा के आदर्शों को संबंधित करता है और देश के पुनर्निर्माण के लिए अपने विद्यार्थियों के मन में प्रतिबद्धता की भावना भरने का प्रयास करता है।

इसी प्रकार, काशी विद्यीपठ की स्थापना 1920 में असहयोग आंदोलन के दौरान वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था प्रदान करने के लिए की गई थी। यह शीघ्र ही राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र बन गया। 1947 में काशी विद्यापीठ ने समाज कार्य में शैक्षिक कार्यक्रम प्रारंभ किया।

बाद में कई स्कूल प्रारंभ हुए जिनमें 1950 में बड़ौदा में, चेन्नई और लखनऊ में 1954 में और निर्मला निकेतन 1955 में शुरू हुए। बड़ौदा महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय पहला संस्थान था जिसने संकाय स्थिति प्राप्त की (1951 में, इस संस्थान ने संकाय स्थिति प्राप्त की)। बड़ौदा का एम.एस. विश्वविद्यालय समाज कार्य में स्नातकोत्तर और पीएच.डी. उपाधियाँ प्रदान करता हैं।

1952 में मेरी क्लबवाला जादव द्वारा, भारतीय समाज कार्य सम्मेलन की मद्रास स्टेट ब्रांच (जिसका नाम बदल कर भारतीय समाज कल्याण परिषद रखा गया) और सेवा संघ (गिल्ड ऑफ सर्विसिज़) के तत्वाधान के अंतर्गत मद्रास स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना की गई। इसके द्वारा एम.एम.डब्ल्यू., एम.फिल और पीएच. डी. उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं। स्नातकोत्तर स्तर पर यह स्कूल शहरी एवं ग्रामीण समुदाय विकास, परिवार और बाल कल्याण, चिकित्सीय और मनोचिकित्सा संबंधी समाज कार्य और श्रम कल्याण में विशेषज्ञता प्रदान करता है।

लखनऊ विश्वविद्यालय में समाज कार्य का अध्यापन और अनुसंधान, भारत में व्यवसायिक समाज कार्य शिक्षा के विकास के पहले चरण में प्रारंभ किया गया था। "जे.के. समाजशास्त्र पारिस्थितिकी और मानव संबंध" संस्थान की स्थापना 1948 में भारत में समाजविज्ञानों के वरिष्ठ अध्यापक, स्वर्गीय प्रोफेसर राधा कमल मुखर्जी के प्रेरक नेतृत्व के अंतर्गत हुई। संस्थान के निदेशक के रूप में प्रो. मुखर्जी ने 1949 में समाज सेवा में डिप्लोमा प्रारंभ किया। 1952 में इसके स्थान पर दो वर्ष का स्नातकोत्तर कार्यक्रम शुरू हुआ। 1954 में समाज तकनीक में स्नातकोत्तर (एम.एस.टी.) की उपाधि दी जाने लगी। 1955 में, एम.एस.टी. की नाम पद्धति बदल कर समाज कार्य में स्नातकोत्तर (एम.एस.डब्ल्यू) हो गई। 1956 में, समाजशास्त्र और समाज कार्य का एक संयुक्त विभाग निर्मित किया गया। इसके लिए तत्कालीन अर्थशास्त्र विभाग से समाजशास्त्र को लिया गया और "जे.के. समाजशास्त्र, पारिस्थितिकी और मानव संबंध" संस्थान से समाज कार्य को लिया गया। इस संयुक्त विभाग को 1972 में समाज शास्त्र का स्वतंत्र विभाग बनाने के लिए फिर से द्विशाखित किया गया। लखनऊ विश्वविद्यालय का समाज कार्य विभाग, समाज कार्य पाठ्यक्रमों की पूरी शृंखला, स्नातक से लेकर डी.लिट्. स्तर तक प्रस्तुत करता है। इसको समाज कार्य में, पीएच.डी. और डी.लिट्. उपाधि कार्यक्रम प्रारंभ करने वाले देश के पहले विभाग का गौरव भी प्राप्त है।

1955 में हार्ट (हृदय) ऑफ मेरी की बेटियाँ के नाम से जाने वाली कुछ साहसी महिलाओं के दल द्वारा समाज कार्य के कॉलेज, निर्मला निकेतन की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य था समय के संकेतों के अनुसार लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं पर तत्परता से अनुक्रिया करना। भारत में स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में संस्थापकों ने यह अनुभव किया कि राष्ट्र के विकास के लिए किए जाने वाले संघर्ष में अतिसंवेदनशील सामाजिक सरोकार द्वारा इतना सहयोग नहीं दिया जा सकेगा जितना सूक्ष्मदृष्टि से प्रतिबद्ध कार्यवाही द्वारा इस भावना ने समाज कार्य शिक्षा के कार्यक्रम की संकल्पना बनाने की ओर अग्रसर किया जिससे युवा व्यक्तियों को विद्यमान सामाजिक समस्याओं के समाधान में सहायता करने और उन्हें समझने के लिए तैयार किया जा सके। ये समस्याएं थीं : व्यापक निर्धनता, खराब स्वास्थ्य, बेरोज़गारी, निरक्षरता और सामाजिक असमानताएं। शैक्षिक कार्यक्रम मानव प्रतिष्ठा और सामाजिक न्याय के स्वप्न के आधार पर बनाया गया था जो विशेष रूप से सुविधावंचित लोगों के संबंध में था। इस कॉलेज द्वारा समाज कार्य में स्नातक, स्नातकोत्तर, पीएच.डी. और डिप्लोमा कार्यक्रम प्रदान किए जाते हैं।

1950 के दशक तक, भारत में समाज कार्य शिक्षा के पहले 14 वर्षों में बहुत कम संस्थान स्थापित किए गए थे। समाज कार्य शैक्षिक संस्थाओं के परिणाम को देखकर सरकार ने समाज कार्य व्यवसाय के महत्व को पहचाना और अनुभव किया। इस दिशा में पहला प्रयास 1952 में हुआ जब पं. जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में समुदाय विकास कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। इनको प्रारंभ करने का उद्देश्य यह था कि विकास प्रक्रिया में लोगों को सहायता करने के लिए जुटाया जाए और आत्म निर्भर समुदाय बनाए जाए।

समाज कार्य शिक्षा पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की दूसरी समीक्षा समिति (यू.जी. सी., 1980 पृ.153) में यह रिपोर्ट किया गया कि भारत में 1975 में समाज कार्य के 34 सकूल/विभाग थे। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में और 21वीं शताब्दी के पहले कुछ वर्षों में भारत में समाज कार्य स्कूल/विभागों में बेतरतीब वृद्धि होती देखी गई। 2004 के अंत तक, यह अनुमान किया गया है कि भारत में समाज कार्य के लगभग 200 स्कूल हैं जिनमें से अधिकांश महाराष्ट्र राज्य में और दक्षिण भारत के चार राज्यों आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल और कनार्टक में है। महाराष्ट्र में, अकेले नागपुर जिले में ही समाज कार्य शिक्षा की लगभग 25

संस्थाएं हैं। देश के उत्तर पूर्वी भाग में जिसमें कि सिक्किम को मिला कर आठ राज्य हैं समाज कार्य के केवल दो विभाग हैं, एक सिलचर में आसाम विश्वविद्यालय के साथ है और दूसरा मिज़ोरम एज़ेवल में मिज़ोरम विश्वविद्यालय के साथ। इसी प्रकार जम्मू कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में समाज कार्य विभाग अभी हाल ही में स्थापित किए गए हैं; एक जम्मू में और दूसरा शिमला में केवल एक बिहार राज्य ही बचता है जहाँ समाज कार्य की कोई संस्था नहीं है। यद्यपि, हमारे यहाँ समाज कार्य शिक्षा की इतनी संस्थाएं हैं परंतु विडंबना यह है कि हमारी कोई एकसमान पाठ्यचर्या या अध्यापन विधियाँ नहीं हैं। इसके अलावा, अधिकांश समाज कार्य संस्थाएं शहरी क्षेत्रों में है और ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यार्थियों के लिए ऐसी संस्थाएं बहुत ही कम हैं।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू), नई दिल्ली द्वारा प्रारंभ किए गए प्रयासों का उल्लेख किए बिना, भारत में समाज कार्य शैक्षिक संस्थाओं के बारे में चर्चा अधूरी ही रहेगी। इग्नू ने 2004 से समाज कार्य में स्नातक उपाधि कार्यक्रम प्रस्तुत करना प्रारंभ किया था। इग्नू द्वारा शिक्षण सहायक साधनों के रूप में देशीय पाठ्यचर्या पठन सामग्री और श्रव्य दृश्य कार्यक्रम बनाए गए हैं और टेलीकॉन्फ्रेंसिंग सत्र सहित उपग्रह संचार नेटवर्क का भी प्रयोग किया जाता है। जिस प्रकार टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज कार्यक्रम का उद्गम एक प्रोटेस्टेंट मिशनरी से हुआ था उसी प्रकार इग्नू का कार्यक्रम भी भारत में केथोलिक चर्च के शीर्ष निकाय जिसका नाम कैथोलिक बिशप्स कॉनफ्रेंस ऑफ इंडिया (सी.बी.सी.आई.) द्वारा प्रारंभ किया गया है।

व्यावसायिक संगठन

समाज कार्य शैक्षिक संस्थाओं की वृद्धि के साथ व्यावसायिक संगठनों की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। इस भाग में हम कुछ ऐसे ही व्यावसायिक संगठनों की चर्चा करेंगे:

भारतीय व्यावसायिक समाज कार्य सोसाइटी (द इन्डियन सोसाइटी ऑफ प्रोफेशन सोशल वर्क — आई.एस.पी.एस.डब्ल्यू.)

द इन्डियन सोसाइटी ऑफ प्रोफेशनल सोशल वर्क (आईएसपीएसडब्ल्यू) भारत में व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ताओं का प्राचीनतम संघ है। इसका लक्ष्य समाज विकास के लिए समाज को सशक्त करना है इस सोसाइटी को पहले

इन्डियन सोसाइटी ऑफ साइकिएट्रिक वर्क (भारतीय मनश्चिकित्सा समाज कार्य सोसाइटी) के नाम से जाना जाता था। यह 1970 में राँची के मनश्चिकित्सा केन्द्रीय संस्थान के मनश्चिकित्सा समाज कार्य विभाग में स्थापित किया गया था। बाद में यह लगातार उन्नति प्राप्त करता गया और अब यह बैंगलोर के राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य और स्नायु विज्ञान संस्थान, मनश्चिकित्सा समाज कार्य विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त करके व्यावसायिक विशिष्टता की वर्तमान स्थिति तक पहुँच गया है। सोसाइटी का वर्तमान नाम वर्ष 1988 में समाज कार्य की सभी विशेषज्ञताओं के शोधकर्ताओं, व्यावसायिकों और प्रशिक्षकों के प्रतिनिधित्व की बढ़ती संख्या को देखते हुए सोचा गया था। इस संघ का मुख्य कार्य व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ताओं को सम्मिलित करके उनके बीच बहस, चर्चा द्वारा भारत में प्रयुक्त करने के लिए समाज कार्य की संकल्पनात्मक रूपरेखा और उपयुक्त देशीय अंतःक्षेपों का विकास करना है। इस उद्देश्य को सुगम बनाने के लिए अभी तक इस सोसाइटी ने पूरे देश में विविध सामाजिक मुद्दों पर 24 वार्षिक सम्मेलन और अनेकों सेमिनार तथा संगोष्ठियाँ की हैं। इस सोसाइटी के अनेकों आजीवन सदस्य विश्व भर में विविध प्रतिष्ठित राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संगठनों, विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थाओं में प्रतिनिधित्व कर रहे है। सोसाइटी नियमित रूप से समाज कार्य ओर इसके संबंधित क्षेत्रों से अनेकों सम्मानित व्यक्तित्वों को अनन्यता प्रदान करती है और उनका अभिनंदन करती है।

भारत में समाज कार्य स्कूल संघ (एसोसिएशन्स ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इंडिया-- ए.एस.एस.डब्ल्यू.आई.)

ए.एस.एस.डब्ल्यू.आई. की स्थापना 1959 में बड़ौदा में हुई थी। समाज कार्य के सभी स्कूलों ने एक साथ सहयोग करके भारत में ऐसासिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क का गठन किया। कुछ व्यक्तियों ने भी आगे बढ़ कर भारत में प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता संघ का गठन किया। यह संघ अपनी राज्य शाखाओं द्वारा काम कर रहा है। तथापि, इसकी सदस्यता स्वैच्छिक है और इसलिए बहुत कम (समाज कार्य के विद्यमान स्कूलों/विभागों के एक चौथाई से भी कम) संस्थान इसके सदस्य बने।

भारत में व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ता राष्ट्रीय संघ (नेशनल ऐसोसिएशन ऑफ प्रौफेशनल सोशल वर्कर्स इन इंडिया--एन.ए.पी.एस.डब्ल्यू.आई.)

एन.ए.पी.एस.डब्ल्यू.आई. एक लाभ रहित, गैर-राजनीतिक राष्ट्रीय स्तर का संगठन है जो समाज कार्य व्यवसाय के स्तर और स्थिति को सवंर्धित करने के लिए समर्पित है। 9 सितम्बर, 2005 को इस संघ को 1860 के सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम XXI के तहत् एक सोसाइटी के रूप में कानूनी स्थिति प्राप्त हुई। इस राष्ट्रीय संघ में देश के प्रत्येक राज्य से समाज कार्य शिक्षक और व्यावसायिक शामिल हैं। एन.ए.पी.एस.डब्ल्यू.आई. देश में समाज कार्य व्यवसाय को सवंर्धित करने के लिए दोहरे उद्देश्यों को पूरा करने का इरादा रखती है। इसके लिए उसका एक उद्देश्य तो समाज कल्याण और समाज विकास वृतखण्ड में सेवाओं की गुणवत्ता को सुधारना है और दूसरा उद्देश्य समाज कार्य व्यावसायिकों के हितों की सुरक्षा करना है।

एन.ए.पी.एस.डब्ल्यू.आई. का उद्देश्य शिक्षा, अनुसंधान, प्रशिक्षण, नेटवर्किंग, वकालत (पक्ष समर्थन), संसाधन विकास द्वारा व्यावसायिक समाज कार्य की शिक्षा, प्रशिक्षण और अभ्यास में उत्कृष्टता को बढ़ावा देना है। इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

- समाज कार्य शिक्षा के बारे में विविध स्तरों पर जागरूकता बढ़ाना
- व्यावसायिक समाज कार्य के अभ्यास में उच्चतम व्यावसायिक स्तरों और नीतिशास्त्रों को सवंर्धित करना
- समाज कार्य अंतःक्षेपों की जानकारी और अभ्यास आधार को आगे बढ़ाना जो लोगों, उनके परिवार और परिवेश के जीवन की गुणवत्ता और जीवन स्तर का बेहतर बनाते हैं
- व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ताओं में संचार को तीव्र करना और सहयोग को पोषित करना
- सामाजिक परिवर्तन को सवंर्धित करना, लोगों का सशक्तिकरण करना और उनकी मुक्ति ताकि उनकी कुशलता की वृद्धि हो, मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों का साथ देते रहना
- सदस्यों के ज्ञान के उन्नयन के लिए अनुसंधान, क्रिया और सतत् शिक्षा के अन्य रूपों का संवर्धन करना
- सामाजिक कार्य बन्धुता (भाईचारे) और इसके विविध उपभोक्ता समूहों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कार्यक्रमों और नीतियों के लिए

कुछ अन्य क्षेत्रीय संघ भी विद्यमान है, जिनके नाम हैं:

- बॉम्बे एसोसिएशन ऑफ ट्रेन्ड सोशल वर्कर्स (बी.ए.टी.एस.डब्ल्यू.)
- महाराष्ट्र एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्क एजूकेटर्स (एम.एटी.एस.डब्ल्यू.ई.)
- कर्नाटक एसोसिएशन ऑफ प्रोफेशनल सोशल वर्कर्स (के.ए.पी.एस.डब्ल्यू.)
- प्रोफेशनल सोशल वर्कर्स फोरम चेन्नई (पी.एस.डब्ल्यू.एफ.सी.)

ऐसे क्षेत्रीय संगठनों की गतिविधियाँ स्थानीय स्तर की बैठकों, सम्मेलनों तक सीमित हैं और उनको शायद ही कोई अधिकार प्राप्त हैं।

यद्यपि, समाज कार्य पर दूसरी समीक्षा समिति ने लगभग तीन दशक पूर्व भारत में समाज कार्य शिक्षा के लिए राष्ट्रीय परिषद स्थापित करने की सिफारिश की थी, परंतु यह काम अभी तक शुरू नहीं हो पाया है।

निर्णायक मुद्दे

हमारे देश में, समाज कार्य शिक्षा सात दशक पुरानी है। इस अवधि के दौरान इसने बड़ी संख्या में युवकों को अपनी उपाधियाँ पूरी करने, मानव सेवा मूल्य विकसित करने और समाज की बेहतरी के लिए काम करने की ओर आकर्षित किया है। समाज कार्य पाठ्यक्रम में प्रवेश प्राप्त करने के इच्छुक विद्यार्थियों की बढ़ती माँग के साथ, हमें समाज कार्य की अधिक संस्थाएं स्थापित करने की ज़रूरत है खासतौर से उन जगहों पर जहाँ अभी कोई ऐसी संस्था नहीं है।

इसके बाद, हमें इस शिक्षा और प्रशिक्षण की गुणवत्ता का मानकीकरण करने की जरूरत है जो देश भर में समाज कार्य की अनेकों संस्थाओं द्वारा प्रदान की जा रही है। समाज कार्य की ये शैक्षिक संस्थाएं पाठ्यचर्या, सामान्य पाठ्यक्रम बनाम प्रस्तुत विशेषज्ञता, गतिविधियों फोकस, अवधि, क्षेत्र कार्य घटकों की प्रशिक्षण सामग्री आदि के संदर्भ में एक दूसरे से काफी भिन्नता रखती है। इन संस्थाओं में विद्यार्थियों को उपलब्ध कराई जा रही क्षेत्र कार्य प्रशिक्षण सामग्री और शिक्षा का स्तर अच्छा होना चाहिए।

यह भी देखा जाता है कि अधिकांश समाज कार्य शैक्षिक संस्थाएं शहरी क्षेत्रों में स्थित हैं, विद्यार्थी शहरी स्थानों पर क्षेत्र कार्य अभ्यास करते हैं और शहरों तथा महानगरों में नौकरियाँ करना पसन्द करते हैं, परंतु, समाज कार्य व्यावसायिकों

की सबसे अधिक ज़रूरत ग्रामीण क्षेत्रों में होती है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत अधिक संख्या में लोग रहते हैं।

इसके अलावा, शिक्षा के एकसमान स्तरों को बनाए रखने और संस्थाओं एवं व्यावसायिकों को प्रत्यायन प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर परिषद का होना हमारे लिए आवश्यक है। उत्कृष्ट समाज कार्य शिक्षकों और व्यावसायिकों के बीच विभिन्न मंचों पर विचार-विमर्शों द्वारा भारतीय चिकित्सा परिषद की पद्धति के अनुरूप राष्ट्रीय परिषद गठित करने के लिए प्रयास किए गए हैं।

चूँकि, समाज कार्य साहित्य, अभ्यास की पद्धतियाँ, दृष्टिकोण, सिद्धांत आदि पश्चिम की देशों से भारी मात्रा में उद्धृत किए गए हैं, अतः यह जरूरी है कि हम देशीय दृष्टिकोणों को भी विकसित करें। इसके लिए यह अपेक्षित है कि शिक्षाविद् और व्यावसायिक अपने अनुभवों के प्रलेख दें जिससे देशीय दृष्टिकोण विकसित करने की प्रक्रिया सुगम बन सके।

सामाजिक यथार्थताओं में परिवर्तन के साथ समाज कार्य अंतःक्षेपों के लिए नए उपभोक्ता समूह उभर रहे हैं जैसे एच.आई.वी./एड्स से ग्रस्त व्यक्ति, विस्थापन से प्रभावित समुदाय, सेज़ (SEZ) वैश्विक कार्यकताओं के सामने आने के कारण लोगों के लिए काम के अवसरों का समाप्त होना, सामाजिक सुरक्षा, बढ़ती हिंसा और असंतोष से निपटना आदि। इसके फलस्वरूप ऐसे प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताओं की माँग बढ़ रही है जो उच्च संवेदनशीलता और उपयुक्त मनोवृत्ति के साथ इन क्षेत्रों में काम कर सकें।

सामाजिक परिवर्तन के मद्देनज़र यह अत्यंत ज़रूरी प्रतीत होता है कि अपनी पाठ्यचर्या और शिक्षण की पद्धतियों में संशोधन किए जाए, जिसको नियमित अवधियों पर अद्यतन करने की जरूरत होती है। इसी प्रकार अभ्यासरत सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए भी समय-समय पर पुनश्चर्या प्रशिक्षण दिए जाने चाहिए।

कम वेतन और नौकरियों में गतिहीनता, अधिक कुल बिक्री, ज्यादा खर्च (थकान) कुछ निर्णायक मुद्दे हैं जिनका समाधन तभी होगा यदि हम समाज कार्य शिक्षण और अभ्यास में मानकीकरण ला सकें और साथ ही साथ देश में समाज कार्य प्रशासन की लाभदायक और वांछनीय छवि प्रस्तुत कर सकें।

सारांश

इस अध्याय में, आपने, भारत में समाज कार्य व्यवसाय के ऐतिहासिक विकास के बारे में अध्ययन किया है। प्रारंभ में, समाज सुधार आंदोलनों ने भारत में स्वैच्छिक समाज कार्य के लिए मंच स्थापित किया। धार्मिक मानकों और परंपराओं ने भी धर्मार्थ, दान, साथियों की सहायता करना, श्रम-दान आदि पर समाज कार्य के रूप में बल दिया। तब यह भारत में समाज कार्य शिक्षा के प्रसार और अग्रणी संस्थाओं जैसे टी.आई.एस.एस. और डी.एस.एस. डब्ल्यू. के प्रांरभ होने के साथ आगे बढ़ा। इस अध्याय में सामाजिक कार्यकर्ताओं के विविध व्यावसायिक संघों (संगठनों) का भी वर्णन किया गया है। अंत में, भारत में समाज कार्य शिक्षा और प्रशिक्षण को प्रभावित करने वाले कुछ निर्णायक मुद्दों का भी वर्णन किया गया है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

भट्ट, एस और पठारे, एस. (2005) : सोशल वर्क लिटरेचर इन इन्डिया : ए क्रिटिकल रिव्यू। सप्लीमेंटरी रीडिंग मेटीरियल-बी एस डब्ल्यू ई-002, इग्नू।

देसाई, ए.एस. (1987) : डेवलेपमेंट ऑफ सोशल वर्क ऐजूकेशन, एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इंडिया, मिनिस्ट्री ऑफ सोशल वैल्फेयर, गवर्मेंट ऑफ इन्डिया, दिल्ली।

पटेल सी. (संपा.) 1959 : सोशल वर्क प्रैक्टिस-रिलीजिओ-फिलोसोफीकल फाउंडेशन। रावत प्रकाशन, नई दिल्ली।

सिंह, एस. एवं श्रीवास्तव, एस.पी. (2005) : टीचिंग एंड प्रैक्टोस ऑफ सोशल वर्क इन इन्डिया-रियलिटीज़ एंड रेसपोन्सेज़। न्यू रॉयल बुक कं. लखनऊ।

कुमार एच. (1994) : सोशल वर्क-एन ऍक्सपीरियेंस एंड ऐक्सपेरीमेंट इन इन्डिया। मॉडल डी.टी.पी. सिस्टम्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

पाठक, एस. (1981) : सोशल वेल्फेयर। मेकमिलन इन्डिया लिमिटेड, दिल्ली।

पाठक, एस. (2000) : सोशल वर्क एजूकेटर्स एवं स्कॉलर्स : एम एनीमेडवर्जन्स। इन्डियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, खंड 61 (2), 212-220

वाडिया, ए. आर. (1961) : हिस्ट्री एंड फिलॉसाफी ऑफ सोशल वर्क इन इन्डिया। अलाइड पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।